ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 115-117**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

भारतीय लोकतंत्र : प्रकृति एवं कार्य

किरण कुमारी
शोध अध्येत्री–राजनीति विज्ञान विभाग,मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार) भारत

Received-18.02.2025, Revised-25.02.2025, Accepted-31.02.2025 E-mail : kkcocpo1930@gmail.com

सारांशः शासन की विभिन्न पद्धतियों में एक प्रजातंत्र है। यूं तो विधिवत रूप से शासन की पद्धति कैसी हो? यह प्लेटो के समय से दृष्टिगोचर होता है। इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि 2400 साल से पहले शासन पद्धति थी ही नहीं । आधुनिक समय में ब्रिटेन में प्रजातंत्र का क्रमिक विकास हुआ है और प्रजातंत्र सर्वमान्य शासन का स्वरूप है। हालांकि सैनिक शासन जहां–तहां देखे जा सकते हैं। व्याख्याकार तो यह भी कह सकते हैं कि साम्यवादी देशों में प्रजातंत्र उस स्वरूप में नहीं होना चाहिए जैसा है। परंतु, इतना सच तो है ही कि साम्यवादी शासन व्यवस्था भी अपने को प्रजातांत्रिक तो कहती ही कहती है।

कुंजीभूत शब्द– भारतीय लोकतंत्र, प्रजातंत्र, शासन पद्धति, क्रमिक विकास, राजतंत्र शासन, विशिष्टवर्गीय तंत्र

राजतंत्र शासन की वह पद्धति है, जो वंश परंपरा पर आधारित है और यह एक व्यक्ति विशेष के नियंत्रण में होती है। यद्यपि यह समाप्त होती जा रही है और जहां राजतंत्र (ब्रिटेन) है, वह तो प्रजातांत्रिक पद्धति का बेहतरीन नमूना है। यद्यपि अरस्तु जैसे महान दार्शनिक भी राजतंत्र को अपेक्षाकृत बेहतर व्यवस्था बताते हैं, जो लोकतंत्र एवं विशिष्टवर्गीय तंत्र का मिश्रण है।[1] परंतु, यह बहुत प्राचीन दर्शन था।

लोकतंत्र क्या है? आधुनिक काल में, पैरेये, मोस्का, मिशेल्स, सी. राईट मिल्स जैसे विद्वानों ने प्रजातंत्र के एक ऐसे सिद्धांत का प्रतिपादन किया जहां कुछ लोग तो शासन करने के लिए पैदा होते हैं, जबकि कुछ लोग शासित होने के लिए। चुनावों में भी शासक का बदलाव मात्र विशिष्टवर्गीय लोगों में ही होता रहता है। परंतु, आधुनिक संदर्भ में शासन करने के लिए पैदा होने की बात प्रजातंत्र के परिप्रेक्ष्य में उपयुक्त दिखाई नहीं देती है ।

तो फिर प्रजातंत्र है क्या? आजतक इसकी सबसे उपयुक्त परिभाषा अब्राहम लिंकन (1863) के गेट्सबर्ग संबोधन में मिलती है जो न केवल अत्यधिक मान्य हुई, वरन् प्रजातंत्र का आधारभूत दर्शन सिद्ध हुई। प्रजातंत्र एक ऐसी सरकार स्थापित करता है जो लोगों से, लोगों द्वारा, लोगों के लिए है। कुल मिलाकर, यदि हम शासन में दो ऐसे समुदायों की कल्पना करें जो एक केंद्र में है और दूसरी परिधि में तो प्रजातंत्र एक शासन तंत्र है जो दोनों के हितों के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। हेवुड[2] ने अपनी पुस्तक पॉलिटिक्स में लोकतंत्र के अर्थ को समझने के लिए निम्न तर्कों का सहारा लिया–

- एक व्यवस्था जो गरीबों तथा गैर– विशेषाधिकार प्राप्त लोगों द्वारा संचालित है।
- सरकार का एक ऐसा प्रकार है, जिसमें बिना किसी व्यवसायिक, राजनीतिज्ञ या जन–अधिकारियों की आवश्यकता के आम आदमी अपने ऊपर निरंतर एवं प्रत्यक्षतः शासन करता है।
- लोकतांत्रिक समाज व्यक्तिगत योग्यता एवं समान अवसरों पर आधारित होता है, न कि विशेषाधिकारीकृत या पदसोपानिक संरचना पर।
- एक ऐसी व्यवस्था है जो सामाजिक विषमताओं को कम करने के लिए कल्याण तथा पुनर्वितरण जैसी पद्धति को अपनाती है।
- बहुसंख्यक सिद्धांत पर आधारित एक ऐसी व्यवस्था जहां निर्णय लेने की प्रक्रिया में बहुमत का निर्णय मान्य होता है।
- विधि एवं नियमों की ऐसी व्यवस्था है, जो बहुमत की शक्तियों पर संतुलन एवं नियंत्रण करते हुए अल्पसंख्यकों के हितों तथा अधिकारों के संरक्षण का पूरा भरोसा देती है।
- सार्वजनिक पदों के लिए एक प्रतियोगिता आधारित स्वतंत्र एवं निष्पक्ष निर्वाचन प्रणाली अपनाई जाती है।

परंतु, यह विश्लेषण निश्चित रूपेण सर्वमान्य नहीं कहा जा सकता। इसकी कमियां गिनाते हुए लॉर्ड ब्राइस कहते हैं, ष्जहां आत्मनियंत्रण, बुद्धिमत्ता, नैतिकता, उत्तरदायित्व की प्रबल भावना एवं सक्रिय जनभागीदारी होती है वहीं लोकतंत्र मजबूत होता है, जबकि अकर्मण्यता, भ्रष्टाचार, व्यक्तिवाद, वंशवाद, लेटलतीफी, लाल फीताशाही आदि बुराइयों से लोकतंत्र क्षीण एवं घातक बन जाता है।ष और ये अवगुण चूंकि मानवीय हैं, इसलिए लोकतंत्र इससे अछूता भी नहीं रह सकता । परंतु यह भी सच है कि चेतना, प्रशिक्षण और आत्मसंयम के आधार पर लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में इन अवगुणों का इलाज भी छिपा है।

भारतीय लोकतंत्र प्रकृति एवं कार्य–आइये, प्रजातंत्र की संकल्पना को समझने के बाद भारतीय परिप्रेक्ष्य में लोकतंत्र, इसकी प्रकृति एवं कार्यों को समझने का प्रयास करें।

हम भारत के लोग भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न, समाजवादी पंथ निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को... एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।'' में उद्घोषित लोकतंत्रात्मक गणराज्य के पीछे राजनीतिक तथा सामाजिक जैसे सभी दर्शन एवं मूल्य छिपे हैं। इसका आशय न केवल शासन में लोकतंत्र होने से है, बल्कि समाज भी लोकतंत्रात्मक होने, जिसमें न्याय, स्वतंत्रता, समता और बंधुता की भावना की मौजूदगी हो।[3]

15 अगस्त 1947, जबसे भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक राज का अंत हुआ और भारतीयों को स्वतंत्रता मिली, तब से लेकर आजतक प्रस्तावना में वर्णित लोकतांत्रिक मूल्यों की प्राप्ति का लक्ष्य कुछ प्रासंगिकता के साथ बना हुआ है। भारतवासियों के लिए मात्र स्वतंत्रता प्राप्ति ही अपने आप में अंत नहीं था क्योंकि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी केवल राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए ही नहीं लड़े थे, बल्कि उनका उद्देश्य समाज में एक नई व्यवस्था की स्थापना एवं विकास करना था। आर्थिक एवं सामाजिक विषमताओं को कम करने, गरीबी, बेरोजगारी, अल्परोजगार के उन्मूलन, भूख, कुपोषण की समाप्ति, मानवीय गरिमा की स्थापना, नागरिक अधिकार की गारंटी तथा संरक्षण, सामुदायिक सौहार्द की स्थापना, न्याय एवं अवसरों तक सबकी पहुंच सुनिश्चित करने के संबंध में स्वतंत्र भारत के नेताओं का स्पष्ट दृष्टिकोण था ।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

भारतीय संविधान निर्माताओं ने उदारवादी लोकतांत्रिक संरचना के तहत् शासन की प्रतिनिध्यात्मक पद्धति को अपनाया है। हमारे संविधान में 'जनमत संग्रह' या 'प्लेबीसाईट' जैसे प्रत्यक्ष लोकतांत्रिक अभिकरणों की कोई व्यवस्था नहीं है, जिससे जनता का शासन पर प्रत्यक्ष नियंत्रण हो सके। भारत के लोग अपनी प्रभुता का प्रयोग केंद्रीय स्तर पर संसद के माध्यम से तथा राज्य स्तर पर राज्य विधानमंडल के माध्यम से करते हैं। ये प्रतिनिधि सार्वभौम वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचित होते हैं। कार्यपालिका अर्थात् मंत्रिपरिषद् संसद तथा राज्य विधानमंडल के निचले सदन के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है। यही लोकतांत्रिक मूल्य संसदीय व्यवस्था का केंद्रीय दर्शन है। इसका आशय एक ऐसी लोकतांत्रिक शासन पद्धति से है जो सीमित सरकार एवं लोकप्रिय सहमति के आदर्शों के बीच संतुलन स्थापित करती है।

उदारवाद सरकार पर आंतरिक एवं बाह्य नियंत्रण लागू करता है ताकि नागरिकों की स्वतंत्रता एवं अधिकार जैसे मूल्य राज्य के विनाशकारी हस्तक्षेप से बचे रहें। दूसरी ओर, लोकतंत्र सार्वभौम मताधिकार एवं राजनीतिक समानता पर आधारित नियमित एवं प्रतिस्पर्धात्मक निवार्चन की मांग करता हैं। उदारवादी लोकतंत्र की इन विशेषताओं को हम निम्न प्रकार से देख सकते हैं–

- सरकार का निर्माण जन–प्रतिनिधियों द्वारा होता है और वे जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
- राजनीतिक सत्ता की प्राप्ति के लिए एक से अधिक दल होते हैं और उनमें निरंतर प्रतिस्पर्धा होती है।
- सत्ता प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा खुले रूप से होती है, गुप्त रूप से नहीं। यह खुली प्रतिस्पर्धा निश्चित समय में निर्वाचन द्वारा होती है।
- निर्वाचन सार्वभौमिक मताधिकार के आधार पर होते हैं, जिसके केंद्र में राजनीतिक एवं लिंग आधारित समानता होती है, अर्थात् एक व्यक्ति एक मत और एक मत एक मूल्य ।
- ऐसी व्यवस्था में नागरिक समाज की सशक्त उपस्थिति होती है और वे सरकार के निर्णयों को प्रभावित करने में सक्षम भी होते हैं।
- नागरिक स्वतंत्रताओं में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, संघ बनाने आदि की स्वतंत्रता स्पष्टतः संवैधानिक रूप से दी जाती है।
- शक्तियों के पृथक्करण के तहत् एक–दूसरे पर संतुलन तथा नियंत्रण की भी व्यवस्था होती है, जैसे – कार्यपालिका पर विधायिका का नियंत्रण तो इसी तरह विधायिका पर न्यायपालिका का नियंत्रण ।
- बाजारीकृत अर्थव्यवस्था के भी तत्त्व मिलते हैं, यद्यपि व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं सामूहिक हितों के बीच बेहतर तालमेल स्थापित करने की कोशिश की जाती है।[4]

आधुनिक युग के अधिकांश राजनीतिक चिंतक इस बात पर सहमत हैं कि लोकतंत्र सरकार का एक रूप मात्र न होकर व्यापक एवं नैतिक रूप से एक जीवन पद्धति है, समाज की एक व्यवस्था है और सामाजिक और आर्थिक संबंधों का एक तरीका भी है। ऐसी राजनीतिक और सामाजिक–आर्थिक प्रणाली, नागरिकों की गरिमा और समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृत्व और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित होती है, जिसमें सरकार लोगों के प्रति उत्तरदायी होती है। इन आदर्शों, सिद्धांतों और प्रतिमानों को व्यवहारिक बनाने के लिए कुछ निश्चित शर्तों की आवश्यकता होती है। ये शर्तें तीन प्रकार की हो सकती हैं राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक ।

राजनीतिक परिस्थितियों में विधि का शासन, नागरिकों में समानता तथा राजनीतिक सहभागिता के समान अवसर, संरक्षित अधिकार, जिसमें विशेष रूप से अभिव्यक्ति, विचार, निष्ठा की स्वतंत्रता सम्मिलित है। इसमें नागरिक और राजनीतिक प्रक्रियाओं में सहभागिता की स्वतंत्रता, लोगों की अपनी या अपने प्रतिनिधियों की सरकार, स्वतंत्र एवं निष्पक्ष निर्वाचन तथा असहमति और विरोध के प्रति आदर की भावना भी सम्मिलित होते हैं। सामाजिक शर्तों में प्रतिष्ठा आधारित सामाजिक समानता, विधि के समक्ष समानता, अवसरों की समानता, शैक्षणिक और सांस्कृतिक दृष्टि से विकसित नागरिक, भेदभाव का अभाव एवं सामाजिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक प्रक्रिया में सहभागिता के समान अवसर शामिल हैं। आर्थिक परिवेश से अभिप्राय व्यापक तौर पर विद्यमान असमानताओं का लोप, गरिमामय जीवन के लिए आवश्यक न्यूनतम भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति, संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण, लाभकारी व रोजगार के समान अवसर, समान कार्य के लिए समान वेतन और शोषण के विरुद्ध संरक्षण है।

यह सिद्धांत कल्याणकारी राज्य की संकल्पना में निहित है और यह संकल्पना राज्य की नीति की निदेशक तत्त्वों में समाहित है। प्रस्तावना में जिस 'आर्थिक न्याय' के सुनिश्चित किए जाने की बात कही गई है वह तभी प्राप्त हो सकेगा जब संविधान में जिस लोकतंत्र को दृष्टि में रखा गया है वह 'राजनीतिक लोकतंत्र' तक ही सीमित न रहे। पंडित नेहरू के शब्दों में–[5] भूतकाल में लोकतंत्र को राजनीतिक लोकतंत्र के रूप में ही पहचाना गया जिसमें मोटे तौर से एक व्यक्ति का एक मत होता है। किंतु मत का उस व्यक्ति के लिए कोई महत्त्व नहीं होता जो निर्धन एवं निर्बल है या ऐसे व्यक्ति के लिए जो भूखा है और भूख से मर रहा है, राजनीतिक लोकतंत्र अपने आप में पर्याप्त नहीं है। उसका आर्थिक लोकतंत्र और समानता में धीरे–धीरे वृद्धि करने के लिए और जीवन की सुख–सुविधाओं को दूसरों तक पहुंचाने के लिए तथा सभी असमानताओं को हटाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।'

इसी बात को डॉ. राधाकृष्णन निम्न रूप में कहते हैं दृ जो गरीब लोग इधर–उधर भट भूख से रहे हैं, जिनके पास कोई काम नहीं है, जिन्हें कोई मजदूरी नहीं मिलती और जो मर रहे हैं, जो निरंतर कचोटने वाली गरीबी के शिकार हैं, वे संविधान या उसकी विधि का गर्व नहीं कर सकते ।[6]

इस प्रकार, भारतीय संविधान उपर्युक्त तीनों शर्तों– "राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों" की पूर्ति का वचन देता हुआ प्रतीत होता है। इस बात को डॉ. अंबेडकर ने संविधान सभा में अपने समापन भाषण में कहा थाः

यदि राजनीतिक लोकतंत्र का आधार सामाजिक लोकतंत्र नहीं है तो वह नष्ट हो जाएगा। सामाजिक लोकतंत्र का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है वह जीवन पद्धति जो स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुता को मान्यता देती है। जिसमें ये दोनों अलग–अलग न माने जाकर त्रिमूर्ति के रूप में माने जाते हैं। वे इस त्रिमूर्ति का एकीकरण है। इस अर्थ में यदि एक को हम दूसरे से अलग कर देते हैं तो लोकतंत्र का आशय निष्फल हो जाएगा। स्वतंत्रता को समानता से अलग नहीं किया जा सकता, समानता को स्वतंत्रता से पृथक नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार, स्वतंत्रता एवं समानता को बंधुत्व से विलग नहीं किया जा सकता।[7]

अंबेडकर के इन विचारों को यदि सैद्धांतिक एवं दार्शनिक आधार पर देखा जाए तो जर्मन दार्शनिक कांट के इन शब्दों को देख सकते हैं। कांट ने कहा कि यदि पूरे विश्व में एक जैसी लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपना लिया जाए तो विश्व में जीवन शांतिपूर्ण हो सकता है क्योंकि लोकतांत्रिक व्यवस्था में आपसी लड़ाई–झगड़े की संभावना न्यून होती है। यह अवधारणा इस मान्यता पर आधारित है कि लोकतांत्रिक देशों के भीतर वैसे जनमत से सरकार सुरक्षा प्रदान करती है जो युद्ध को प्रेरित करता हो। भारत ने

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jan-Mar. 2025

सरकार की लोकतांत्रिक पद्धति को अपनाया भी और सभी निराशावादी मान्यताओं को खारिज करते हुए निरंतरता के साथ आगे बढ़ भी रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Swaha Das and Hari Nair : "Nature and Functioning of Democracy" in contemporary india(ed) by No chandokhe and P- Priyadarshi, Pearson, P- 215&16-
2. A- Heywood, Politics, Palgrave foundation,Second Edition, P- 68&69-
3. डी०डी० बसु, भारत का संविधान–एक परिचय, वाधवा एंड कंपनी, 2006, पृ०–23.
4. Andrew Heywood,Politics Palgrave Foundation, Second edition, p- 30-
5. संसदीय लोकतंत्र पर गोष्ठी में पंडित नेहरू का उद्घाटन भाषण, दिनांक–25.02.1956
6. उपराष्ट्रपति का भाषण वही
7. डी०डी० बसु, भारत का संविधान एक परिचय, वाधवा एंड कंपनी 2006, पृ०–24.

*****